# अनुपमा का प्रेम

शरतचंद्र चट्टोपाध्याय

कहानी

# अनुपमा का प्रेम

शरतचंद्र चट्टोपाध्याय

# अनुपमा का प्रेम

ग्यारह वर्ष की आयु से ही अनुपमा उपन्यास पढ़-पढ़कर मष्तिष्क को एकदम बिगाड़ बैठी थी। वह समझती थी, मनुष्य के हृदय में जितना प्रेम, जितनी माधुरी, जितनी शोभा, जितना सौंदर्य, जितनी तृष्णा है, सब छान-बीनकर, साफ कर उसने अपने मष्तिष्क के भीतर जमा कर रखी है। मनुष्य- स्वभाव, मनुष्य-चरित्र, उसका नख दर्पण हो गया है। संसार में उसके लिए सीखने योग्य वस्तु और कोई नही है, सबकुछ जान चुकी है, सब कुछ सीख चुकी है। सतीत्व की ज्योति को वह जिस प्रकार देख सकती है, प्रणय की महिमा को वह जिस प्रकार समझ सकती है,संसार में और भी कोई उस जैसा समझदार नहीं है, अनुपमा इस बात पर किसी तरह भी विश्वाश नही कर पाती। अनु ने सोचा- वह एक माधवीलता है, जिसमें मंजरियां आ रही हैं, इस अवस्था में किसी शाखा की सहायता लिये बिना उसकी मंजरियां किसी भी तरह प्रफ्फुलित होकर विकसित नही हो सकतीं। इसलिए ढूँढ-खोजकर एक नवीन व्यक्ति को सहयोगी की तरह उसने मनोनीत कर लिया एवं दो-चार दिन में ही उसे मन प्राण, जीवन, यौवन सब कुछ दे डाला। मन-ही-मन देने अथवा लेने का सबको समान अधिकार है, परन्तु ग्रहण करने से पूर्व सहयोगी को भी (बताने की) आवश्यकता होती है। यहीं आकर माधवीलता कुछ विपत्ति में पड़ गई। नवीन नीरोदकान्त को वह किस तरह जताए कि वह उसकी माधवीलता है, विकसित होने के लिए खड़ी हुई है, उसे आश्रय न देने पर इसी समय मंजरियों के पुष्पों के साथ वह पृथ्वी पर लोटती-पोटती प्राण त्याग देगी।

परन्तु सहयोगी उसे न जान सका। न जानने पर भी अनुमान का प्रेम उत्तरोत्तर वृद्धि पाने लगा। अमृत में विष, सुख में दु:ख, प्रणय में विच्छेद चिर प्रसिद्ध हैं। दो-चार दिन में ही अनुपमा विरह-व्यथा से जर्जर शरीर होकर मन-ही-मन बोली- स्वामी, तुम मुझे ग्रहण